गन्धर्वराज पुष्पदन्त की शिवाराधना

परम शिवभक्तों की गणना में गन्धर्वराज पुष्पदन्त का नाम विशेष आदर के साथ लिया जाता है। 'शिवमहिम्नःस्तोत्र' शिवविषयक साहित्य का अत्यन्त विशिष्ट और प्रधान अङ्ग है। इसके रचयिता परम शिवभक्त गन्धर्वराज पुष्पदन्त ही थे। शिव की यश-भागीरथी में उनकी पवित्र वाणी ने अवगाहन कर शैव जगत् को जो रत्न प्रदान किये हैं, वे भक्ति-साहित्य की श्रीवृद्धि में सदा अमूल्य योग देते रहेंगे।

गन्धर्वराज पुष्पदन्त प्रतिदिन शिव की आराधना के लिये प्रातःकाल ही एक राजा के उपवन से सुन्दर एवं सुगन्धित पुष्प तोड़ लाया करते थे। राजा पुष्पों को न पाकर मालियों को कठोर दण्ड दिया करता था। मालियों ने बड़े-बड़े प्रयत्न किये, पर फूल ले जानेवाले का पता नहीं लगता था। वे सब इस निर्णय पर पहुँचे कि फूल ले जानेवाला उपवन में आते ही किसी विशेष शक्ति की कृपा से अदृश्य हो जाया करता है। सचिवों ने समस्या का समाधान निकाला, सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि 'उपवन के चारों ओर शिवनिर्माल्य फैला दिया जाय, शिवनिर्माल्य को लाँघते ही चोर की अदृश्य होने की अन्तर्धानिकाशक्ति क्षीण हो जायगी।' ऐसा ही किया गया। गन्धर्वराज को इस योजना का ज्ञान न था। निर्माल्य का उल्लङ्घन करते ही मालियों ने देख लिया। वे पकड़ लिये गये और कारागार में डाल दिये गये।

उन्हें जब यह पता चला कि 'मैंने शिव-निर्माल्य लाँघकर महान् अपराध किया है', तब उन्होंने भगवान् आशुतोष को प्रसन्न करने और उनकी दया प्राप्त करने का दृढ़ संकल्प किया। एक दीन-हीन की तरह, असमर्थ और सर्वथा विवश होकर गन्धर्वराज ने भगवान् शिव का कारागार में स्मरण किया। 'अपराध-मार्जन का एकमात्र उपाय शिवाराधन ही हो सकता है'-ऐसा निश्चय कर उन्होंने भगवान् शिव की प्रसन्नता के लिये स्तोत्र[1] रचा। आशुतोष भगवान् भोलेनाथ की तो गति न्यारी ही है, भक्त ने सच्चे हृदय से पुकारा था, योगियों की अखण्ड समाधि, मुनियों और ध्यानी ज्ञानियों की तपस्या की भी उपेक्षा कर देनेवाले शंकर भक्त की पुकार पर दौड़ पड़े। कारागार में दिव्य प्रकाश छा गया। गन्धर्वराज ने देखा कि भगवान् शिव के मस्तक पर गङ्गा मुसकरा रही हैं, कण्ठ नीला है, गौर वर्ण पर सर्पों की मालाएँ बड़ी सुन्दर लग रही हैं, गज की खाल से प्रतिक्षण उनकी सुन्दरता बढ़ती जा रही है। लोक-लोकान्तर की समस्त सम्पदा उनके चरणों पर लोट रही है। भगवान् शिव के साक्षात्कार ने उनकी भीषण तपस्या को सफल कर दिया, उनका अपराध मिट गया। उन्होंने अनेक प्रकार से उनकी स्तुति की। चरण-धूलि मस्तक पर चढ़ाकर निवेदन किया-'भगवन्! आपकी महिमा की परमावधि को न जानते हुए यदि मेरी स्तुति अनुचित है तो सर्वज्ञ ब्रह्मा आदि की वाणी भी तो पहले आपके यशःस्तवन में थक चुकी है। ऐसी अवस्था में स्तुति करनेवाले पर कोई दोष नहीं लगया जा

1. जिस स्तोत्र की उन्होंने रचना की वह कालान्तर में 'शिवमहिम्नःस्तोत्र' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

सकता। आपके स्तोत्र में मेरा उद्योग अखण्ड और निर्विघ्न हो।' भगवान् शंकर ने भक्त को अभयदान दिया। उनके जन्म-जन्म के बन्धन कट गये। दूसरे दिन राजा ने कारागार में स्वयं उपस्थित होकर उनके दर्शन से अपने सौभाग्य की सराहना की, जिन्हें भगवान् शिव ने अपने दिव्य दर्शन से मुक्त कर दिया, उनको कारागार में बंद रखने का साहस दूसरा व्यक्ति भला, किस तरह कर सकता। राजा ने उनसे अपने अपराध के लिये क्षमा माँगी।

गन्धर्वराज पुष्पदन्त की गणना महान् शिवभक्तों में की जाती है। उन्होंने प्रभासक्षेत्र में 'पुष्पदन्तेश्वर' शिवलिङ्ग की स्थापना की थी। उन्होंने शिवमहिम्नःस्तोत्र के रूप में जो साहित्य दान किया है, उससे असंख्य जीवों का कल्याण हो रहा है। शिवमहिम्नःस्तोत्र[1] के साथ-ही-साथ परम भक्तप्रवर गन्धर्वराज पुष्पदन्त का भी नाम अमिट और अमर है। अपनी शिवाराधना से उन्हें भगवान् शिव का सांनिध्य और शिवगणों का आधिपत्य प्राप्त हुआ।

स्कन्दपुराण[2], अवन्तीखण्ड, चतुरशीति लिङ्ग-माहात्म्य के 77वें अध्याय में पुष्पदन्त की शिवभक्ति के विषय में एक रोचक कथा आयी है, तदनुसार प्राचीन काल में शिनि नाम के एक धर्मात्मा अयोनिज ब्राह्मण थे। उनके कोई संतान नहीं हुई थी। उन्होंने अयोनिज पुत्र की प्राप्ति के उद्देश्य से दीर्घकालतक कठोर तप द्वारा भगवान् शंकर की आराधना की। अपने महान् तप से वे महान् तेजस्वी हो गये। उनके तपस्तेज से सभी नदियों का जल सूखने लगा, स्वर्ग में देवगण क्षुब्ध हो उठे। दिक्पाल एवं कुलपर्वत भी विचलित होने लगे। सम्पूर्ण पृथिवी हिलने-डुलने लगी। उस समय मेरु पर्वत पर समासीन भगवती पार्वती ने महादेवजी से कहा-'देव! महामुनि शिनि आपका भक्त है, उसने दुष्कर तप द्वारा महान् कष्ट सहा है। हे प्रभो! आपका भक्त दुःखों की विभीषिकाओं का सामना करे यह अच्छी बात नहीं है, अतः हे देव ! आप कृपा करके अपने भक्त पर दया कीजिये।' जगन्माता पार्वती के ऐसा कहने पर भगवान् ने मुसकराते हुए कहा- 'हे देवि! ऐसा ही होगा।' इसके बाद उन्होंने अपने गणों का स्मरण किया। क्षणभर में ही सहस्त्रों महान् रूद्रगण उपस्थित होकर हाथ जोड़कर कहने लगे-'स्वामिन्! हमें आज्ञा दीजिये।' इसमें गुणाधिप पुष्पदन्त भी थे। तब भगवान् शंकर बोले-'गणों! शिनि नामक एक ब्राह्मण मेरा भक्त है, वह अयोनिज एवं अजर-अमर पुत्र की इच्छा से महान् तप कर रहा है, तुममें से कौन ऐसा है जो भूलोक में उसका पुत्रत्व स्वीकार करेगा। मुझे तो भक्त की इच्छा पूर्ण करनी है, क्योंकि मेरे भक्त का संकल्प किसी भी प्रकार से मिथ्या नहीं हो

1. यह स्तोत्र इसी पुस्तक में अन्यत्र दिया गया है। यजुर्वेद के 'रुद्राध्याय' की भाँति इस पवित्र स्तोत्र में हिन्दु समाज की अत्यधिक श्रद्धा है। भगवान् शंकर के अभिषेक में इसका पाठ होता है। शायद ही कोई कर्मकाण्डी ब्राह्मण होगा जिसके पास इस स्तोत्र की पुस्तिका न हो। इस स्तोत्र का महत्त्व इसी बात से सिद्ध होता है कि अबतक अनेक विद्वान् इस पर टीका लिख चुके हैं। शिवजी की अनन्त महिमा है और 'शिवमहिम्नः स्तोत्र' में उसी महिमा का भलीभाँति दिग्दर्शन हुआ है।

2. यहाँ जिस स्कंदपुराण का हवाला दिया जा रहा है वह नाग पब्लिशर्स, दिल्ली द्वारा 1982 में प्रकाशित है।

सकता।[1] भगवान् शंकर का सांनिध्य छोड़कर भूलोक के सभी भोगों का तुच्छ आनन्द प्राप्त करना किसी भी गण को अभीष्ट नहीं था, अतः सभी मुख नीचे कर मौन ही स्थित रहे। किन्तु पुष्पदन्त गणाग्रणी थे, शिव के परम प्रिय थे, शिव की माया से मोहित हो वे बोल पड़े– 'हे देव! इस उत्तम गति को प्राप्त कर अब हम भूलोक जाने को तैयार नहीं हैं।'

पुष्पदन्त से आज्ञापराध हो पड़ा था, अब तो कोपभाजन बनना ही था। भगवान् ने उन्हें अप्रिय वचन कहने के कारण मनुष्यलोक में जन्म देने का शाप दे डाला और वीरक को विप्रवर शिनि के पुत्रत्व प्राप्त करने के लिये कहा। भगवान् की आज्ञा से वीरक ने ब्राह्मणपुत्र के रूप में उनका अनुग्रह प्राप्त किया।

इधर शाप से दुःखी हो भूलोक में आकर पुष्पदंत करुण विलाप करने लगे, प्रभु की आज्ञा न मानने के लिये वे बार–बार पश्चात्ताप करने लगे– अहो! मैं बड़ा पापी हूँ, बड़ा अभागा हूँ, मैंने अपने स्वामी की आज्ञा का उल्लङ्घन किया, अब मेरी क्या गति होगी, कहाँ जाऊँ, क्या करूँ। दुःखित पुष्पदन्त ने पुनः भगवान् महादेव की ही शरण ग्रहण की; क्योंकि अन्य कोई उपाय भी नहीं था। बड़े ही दीन स्वरों में बार–बार प्रणिपात करते हुए वे प्रार्थना करने लगे–

दीनोऽस्मि ज्ञानहीनोऽस्मि प्रणतोऽस्मि च शंकर।
कुरु प्रसादं देवेश अपराधं क्षमस्व मे।।
न हि निर्वहणं यान्ति प्रभूणामाश्रिता रुषः।
प्रसीद देवदेवेश दीनस्य कृपणस्य च ।।
अपि कीटपतंगत्वं गच्छेयं तव शासनात्।
भक्तोऽहं सर्वदा देव पुत्रत्वे हि प्रतिष्ठितः।।

(स्कन्दपुराण, अवन्ती., चतु. लिं. मा. 77/44–46)

पुष्पदन्त की भक्तिनिष्ठा एवं स्तुति से माता पार्वती एवं भगवान् शिव प्रसन्न हुए, उन्होंने उसे दर्शन देकर महाकालवन में जाकर आराधना करने को कहा। फिर क्या था, पुष्पदन्त महाकालवन में गये, वहाँ उन्होंने लिङ्गरूप में भगवान् की आराधना की। उनकी उपासना से भगवान् प्रसन्न हुए। वे भगवती पार्वती तथा देवगणों के साथ महाकालवन में गये। पुष्पदंत नित्य पुष्पों से महादेवजी का अर्चन करते थे। उनकी आराधना से प्रसन्न होकर भगवान् शंकर ने वात्सल्य के वशीभूत हो स्नेहवश पुष्पदन्त को उठाकर अपनी गोद में बिठा लिया और पुनः अपने गणों का अधिपति बना लिया। पुष्पदन्त द्वारा प्रतिष्ठित वह लिङ्ग 'पुष्पदन्तेश्वर' नाम से प्रसिद्ध हुआ। अवन्तीखण्ड में इस लिङ्ग की बड़ी महिमा गायी गयी है।

(यह लेख गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित कल्याण के शिवोपासनांक से लिया गया है।)

❁❁❁❁❁❁

1. **मद्भक्तस्य न संकल्पो मिथ्याभवितुमर्हति।।** (अवन्ती., चतु. लिं. मा. 77/27)